ORIGINAL RESEARCH PAPER

Hindi

ज़िन्दगी है या कोई तूफ़ान है, हम तो इस जीने के हाथों मर चले...! (मेहरुन्निसा परवेज़ के उपन्यास कोरजा के संदर्भ में)

KEY WORDS:

डॉ.विमलेश शर्मा सहायक आचार्य,हिन्दी राजकीय कन्या महाविद्यालय,अजमेर

'अम्मा के लिए जिसने मुझे कभी खोने नहीं दिया'...यह मेहरुन्निसा परवेज़ के 'कोरजा' उपन्यास के प्रारंभ का समर्पण है जिससे परवेज़ का लेखकीय प्रदेय और उनके सर्जनात्मक औद्दिश्य का सहज ही बोध हो जाता है। परवेज़ उपन्यास तथा कहानी साहित्य में विशेष स्थान रखती हैं। स्त्री जीवन के त्रासद पक्ष को कथा रूप देने में परवेज़ सिद्धहस्त हैं। इनके कथा-साहित्य में पारंपरिक स्त्री की बंदिशें उसका संघर्ष तथा आदिवासी परिवेश की समस्याएँ मिलती हैं।'आँखों की दहलीज', 'कोरजा', 'अकेला पलाश', 'समरांगण, और 'पासंग'उनके प्रमुख उपन्यास हैं। 'आदम और हव्वा', 'टहनियों पर धूप', 'ग़लत पुरुष', 'फाल्गुनी', 'अंतिम चढाई', 'सोने का बेसर', 'अयोध्या से वापसी', 'एक और सैलाब', 'कोई नहीं', 'कानी बाट', 'ढहता कुतुबमीनार', 'रिश्ते', 'अम्मा' और 'समर' उनकी प्रमुख कहानियाँ हैं। उपन्यासों के प्रकाशन की पंक्ति में ''कोरजा'' मेहरुन्निसा परवेज का तीसरा उपन्यास है, जो सन् 1977 में प्रकाशित हुआ । इससे पहले उनके दो उपन्यास ''आँखों की दहलीज'', सन् 1969 में और ''उसका घर'', सन् 1972 में प्रकाशित हो चुके थे। ये दोनों ही उपन्यास स्त्री जीवन पर केंद्रित हैं। 'आँखों की दहलीज' में मुस्लिम समाज, उसकी तहज़ीब, संघर्ष और संस्कृति और 'उसका घर' में इसाई समाज और संस्कृति का जीवंत चित्रण हुआ है। लेखिका दोनों ही समाज की प्रामाणिक जानकारी रखती है, इसलिए इनका लिखा सहज है । 'कोरजा' में उन्होंने बस्तर के हाशिये के लोगों , आदिवासी समाज, स्त्री-जीवन के दु:ख-दर्द और संघर्ष को मुखर वाणी दी है । मेहरुन्निसा परवेज ने प्रस्तुत उपन्यास में बस्तर के इतिहास और बाज़ारीकरण और आधुनिकता के कारण वहाँ हो रहे सांस्कृतिक बदलाव पर भी प्रकाश डाला है। 'कोरजा' उपन्यास की इसी विशेषता के कारण उन्हें 'कोरजा' के लिए सन् 1980 में मध्यप्रदेश शासन द्वारा महाराजा वीरसिंह देव पुरस्कार और सन् 1980 में ही उत्तरप्रदेश शासन, उत्तर प्रदेश, लखनऊ द्वारा सम्मानित किया गया ।

हमारे महत्त्वपूर्ण रचनाकारों की यह ख़ूबी रही है कि वे शीर्षक से ही इतने कौतूहल की सृष्टि कर देते हैं कि उसके लिए किताबों की अच्छी-खासी उलट-पुलट करनी पड़ती है। उपन्यास आदिवासी इलाके और बस्तर से संबंधित है इसलिए नामकरण पर भी उसी की छाप है। ''कहीं कहीं धान की फसलें काट ली गई थी कहीं कट रही थीं। खेतों की मेड़ पर बोई गयी राहर की झाड़ियों में फूल लग गए थे ,कहीं-कहीं कलिया भी निकल गईं थीं, पर वह शायद पोची थी, अभी दाने नहीं भरे थे । खेतों से धान की फसल काट ली गई थी और अब छोटे-छोटे बच्चे हाथों में टोकने लिए खाली खेतों में धान की गिरी हुई बाली ढूँढ रहे थे । बस्तर में इस क्रिया को 'कोरजा' कहते हैं, हल्बी भाषा में । नसीमा को याद आया जब वह छोटी थी और मुन्ना ज़िंदा था तब वे दोनों भी छोटा-सा टोकना लेकर मोहल्ले के बच्चों के साथ कटे हुए खेत से गिरी हुई बची खुची बाली चुनने जाते थे फिर लौटकर जमा की गई बालों को चनेवाली को देकर बदले में मुर्रे खरीदते थे ।''[1] धान के पकने और खेतों में बालियों को ढूँढने का स्पक कहीं न कहीं स्त्री मन के समीप बैठता है जो जीवन का ईंधन खोजने के लिए जाने कितने मर्तबा ख़ुद को होम कर देती है। नसीमा की ज़िंदगी को उरेहते ये शब्द इस नामकरण को सार्थकता देते से प्रतीत होते हैं, ''आज नसीमा जा रही थी पास में कोई नहीं था ना रब्बो आपा, ना कम्मो जिनके हाथ पर हाथ रखकर फिर आने का वायदा करती। वह कितनी दूर जा रही है कभी लौट पाएगी भी या नहीं और कभी वह लौटी तो ये बिखरे-छितरे लोग मिल पाएँगे या नहीं। एक साथ कितने लोग कितनी ज़िंदगियां बर्बाद हैं। ज़िंदगी इंसान को ज़िंदा रखने के लिए कितनी तरफ़ से ब्याज वसूलती है फिर भी आदमी जीना चाहता है ।...नसीमा की आँखों के सामने पुरानी यादों का, बीती स्मृतियों का हाट लगा था। नसीमा की आंखें पीड़ा से भर उठी। कितना कुछ बदल गया याद करो तो लगता है एक शताब्दी बीत गई,पुराने सामान की तरह इन बातों की चमक भी धुँधली पड़ गई।''[2] वस्तुतः कोरजा एक स्मृति आख्यान है जिसमें स्त्री जीवन के मनोविज्ञान और समाज की गुंजलकों के बीच उसके जिए जाने की संघर्ष गाथा है। यहाँ स्त्री का हर रूप है, उसके कोरजा से मन के भाव हैं और उन भावों का टूटना, बिखरना और अंततः जड़ होकर अंजुमन बी (नानी) हो जाना है। एक पुरुष के साथ का तमगा और उसके बिछोह में स्त्री का कारुणिक पक्ष और जीए जाने की ज़द्दोजहद इस उपन्यास की मूल संवेदना है जिसे कम्मो, रज्जो, साजो, नसीमा, मोना दीदी, शोना माँ, मंदाकिनी और फातिमा के जीवन से सहज ही जाना जा सकता है।

उपन्यास का आरंभ रन्नो की शादी से होता है जहाँ पर नसीमा भी आती है और वो रब्बो आपा का बदला रूप देखकर हतप्रभ हो जाती है । वह रज्जो आपा जो एहसान मियाँ से बेइंतेहा मोहब्बत करती है और जिसकी जबरन शादी अन्यत्र कर दी जाती है परन्तु आज वह दुनियादारी में व्यस्त ,ठेठ गृहस्थन और अधेड़ युवती के रूप में नज़र आ रही है । नसीमा सोचती है कि क्या यही है वह पुरानी रब्बो आपा? उपन्यास रन्नों की शादी के वातावरण और दो पीढ़ियों के अंतराल को समझाता हुआ पूर्वदीप्ति शैली में आगे बढ़ता है। नसीमा अपने बचपन में फातिमा और करीम की ज़िंदगी में खुद को पाती है, जो उसके माता-पिता हैं। फातिमा उस संस्कार की गुलाम है जिसमें बेटी को पराया धन कहकर उसका ब्याह कर उसे सदा के लिए भूला दिया जाता है। फातिमा का आसरा उसके शौहर करीम हैं जो उसके और उसके दो बच्चों नसीमा (नस्सो) और मुन्ना का आसमां हैं। करीम के बार-बार पीटने पर और उसे मायके जाने का कहने पर वो ज़हर मियाँ को यही तर्क देती है कि, ''मैं क्यों मायके जाऊँ । बीमार सास है फिर मायके में मेरा कौन है जो मुझे पालेगा । बूढ़ा बाप है जो खुद दूसरों का मोहताज़ है। वहाँ जाकर क्या करूँगी । वह (करीम) कहीं रहे किसी भी औरत के साथ रहे मुझे आधी तन्खवाह भेज दे बस।''[3] स्त्री की सामाजिक प्रस्थिति को प्रस्तुत करती मेहरुन्निसा यहाँ यह ही बताना चाहती है कि एक जीवन सिर्फ जिये जाने के लिए कितना बेबस हो जाता है कि वह तमाम चीज़ों से समझौता कर बैठता है। वह अपनी कलाइयों को सूनी होने से बचाने के लिए जाने कितने और कैसे-कैसे रंगों से समझौता कर बैठती है। अपनी बच्चों की आँखों को उम्र से पहले सयाना होना देखती है, तो कहीं किसी ताबीज में अपनी किस्मत को ढूँढती उसे ज़मीन में गाड़ देती है कि ख़ुदा करे उसकी उजड़ी गृहस्थी सँभल जाए। फातिमा को बस यह डर है कि कहीं कुछ हो गया तो इस इतनी बड़ी दुनिया में माँ-बेटी अकेले रह जाएँगे। करीम का घर छोड़कर जाना , सास का गुज़र जाना, अपने नन्हे बेटे मुन्ना का इंतकाल फातिमा को गहरे तक तोड़ जाता है और अंततः वह भी नफीसा को अकेला छोड़ इस दुनिया से रुखसत हो जाती है। नफीसा को अंततः उसकी नानी के यहाँ शरण लेनी पड़ती है जहाँ पहले ही वो बेवा साजो और रज्जो को संभाल रही होती है। नानी नस्सो से प्रेम तो करती है परन्तु उसकी ज़िम्मेदारी के निबाह ठीक से कर पाने में अक्षम होने और उसके भविष्य को लेकर चिंतित है। अंततः हर कोई अपनी किस्मत से समझौता-सा करता जान पड़ता है। नसीमा को छोड़ने आए जहर मियां की बातें नानी चुप होकर सुनते रही। इस बार न आँसू थे, ना गुस्सा था बस जैसे हारने वाला-सा भाव था यानी हार कर उन्होंने नसीमा को स्वीकार कर लिया था। ''वो रात सब रात की तरह ही आई और चली गई । किसी का रोना कोई नहीं जान सका। नानी भी सूनी-सूनी आँखों से अँधेरे को देखती सारी रात जाने क्या ढूँढती, क्या खोती चुप बैठी थी। दूसरी तरफ नसीमा नए अजनबी घर में अपने को पाकर घबराई-सी सारी रात जागते रही, रोती रही और रात धीरे-धीरे आहिस्ता से दबे पैरों बिना आहट किए चुपचाप रुखसत हो गई।''[4] उपन्यास की कहानी साजो, रज्जो और कम्मो की जीवन-गाथा से आगे बढ़ती है। 'साजो' उपन्यास की एक सशक्त पात्र है जो अपने पति उस्मान के गुज़र जाने के बाद अपने तीन बच्चों रफीक, शफीक व मुन्नु की तथा अपने माँ के घर की देखभाल विपरीत परिस्थितियों में करती है। अपना और अपने परिवार के जीवन-यापन के लिए साजो को अपना जीवन जुम्मन मियाँ की हवस को सौंपना पड़ता है। वह जुम्मन मियाँ जो कहलाने के लिए बूढ़े जुम्मन मियाँ हैं, जिनके पुत्र और पुत्रवधू हैं लेकिन वे एक बेवा की मजबूरी का फायदा उठाने की बदनीयत से बाज नहीं आते। अपने घर को बचाने के लिए साजो को जुम्मन की कही का मौन समझौता करना पड़ता है। ''ये दुनिया अजीब है, इसके क़ानून अजीब है। एक माँ को मजबूर हो कर अपनी बेटी से गुनाह करवाना पड़ता है। सब कुछ देखकर भी आंखें मूँद लेना पड़ता है और एक जवान बेवा औरत को किसी बूढ़े खुसट का वहशीपन बर्दाश्त करना पड़ता है। साजो खाला सहती है,हमारे लिए अपने बच्चों के लिए सब सहती है।''[5] स्त्री जीवन जाने कितने दुस्ह मोड़ों से होकर गुज़रता है । इस वहशी समाज में ना उसका बचपन सुरक्षित है ना ही युवा अवस्था ।

यह रज्जो के जीवन में जमशेद की मक्कारी से लेखिका ने इंगित किया है। कम्मो और अमित का प्रेम उपन्यास में एक आदर्श प्रेम बताया गया है जो जाति और धर्म से परे फलता-फूलता है। कम्मो अमित की शराब की लत को छुडाने का भी भरसक प्रयास करती है पर अंततः वह हार जाती है। उनके प्रेम में पाकीज़गी है, संजीदगी है पर साथ ही हालात और नसीब की क्रूरता भी है। यही कारण है कि अमित की मौत के बाद कम्मो भी अपनी जान दे देती है। वही कम्मो जो एहसान और रज्जो के प्रेम के बाद विवाह की बात आने पर एहसान से तर्क करती है कि, "एहसान जो लोग इतने समझदार होते हैं न, जिन्हें अपने घर अपने परिवार वालों का इतना खयाल रहता है न, उन्हें प्यार का नाटक रचने और झूठी तसल्ली देने का कोई हक़ नहीं, समझे।"[8] इन्हीं सारी कहानियों को जीती-देखती और बिसूरती नसीमा है जो आज इन सब किरदारों से दूर छिटक गई है और समय की बदलती बयार के बीच एक ओर रज्जो के गृहस्थन रूप को , दूसरी ओर एहसान के घर-परिवार-बीवी-बच्चों में खुश ज़िंदगी जीने को और रन्नो के बेरोक विवाह को होता देख रही है। उसकी स्मृति में आज भी अम्मा-बाबा है, रज्जो -एहसान है, कम्मो-अमित हैं , मोना दीदी है, संघर्ष करती साजो खाला है और उनके बीच खड़ी वह जीवन के दाव-पेंचों को सँआसी आँखों से देख रही है।

मेहरुन्निसा परवेज़ के इस उपन्यास में संघर्षों की जुगलबंदी के दो पक्ष हैं । एक ओर जहाँ फातिमा पढ़ी-लिखी नहीं है उसकी आवाज़ दबा दी जाती है, उस पर करीम के माध्यम से अन्याय दिखाया गया है परन्तु दूसरी ओर कम्मो अपने आत्म विश्वास के चलते अकेले जीवन जीने का निर्णय लेने वाली ख़ुदमुख्तार स्त्री है। कोरजा की कम्मो के शब्दों में "नहीं अमित मैं अकेले चल सकती हूँ अभी से सहारे का इतना आदी मत बनाओ की खुद अपने पैरों पर खड़ी ही न हो सकूँ।"7 ये विरोधाभास फिर दिखाई देता है जब आत्मविश्वासी कम्मो अपने जीवन से हार मान लेती है। अमित के जाने के पश्चात वह भी अपनी इहलीला समाप्त कर देती है। उपन्यास में एक ओर एहसान का यह कहकर रज्जो से विवाह नहीं करना है कि, "कम्मो इंसान की जिम्मेदारियाँ भी तो कुछ होती है न, अगर ऐसा न होता तो मैं भोपाल से बस्तर नहीं आता। तुम खुद जानती हो मैं सारी की सारी तनख्वाह घर भेज देता हूँ और खुद का खर्च ऊपर की इनकम से चलाता हूँ । इतने पर भी किसी महीने ज़रा देर हो जाती है तो अम्मा का खत पहुँच जाता है । बोलो क्या मैं झूठ कह रहा हूँ । ...इसमें खर्च का सवाल नहीं है कम्मो घर में और रिश्तेदारों में लोग क्या सोचेंगे क्या कहेंगे कि मैंने अपनी जवान बहनों का ख़याल न करके खुद का खयाल किया खुद की शादी रचा ली छोटे छोटे निवाले छीनकर अपने बच्चों को दे दिए।"8 तो दूसरी ओर रज्जो अपनी बेटी रन्नो की शादी उसकी पसंद से यह कहती हुई कर रही है कि, " रन्नो की पसंद है दोनों एक दूसरे को प्यार करते हैं। अब वह पहले सा वक्त नहीं रहा नसीमा... जब प्यार को घरवालों से छिपाकर करना पड़ता था। जबान से निकलता तक नहीं था कि हम फलाँ से प्यार करते हैं। जहाँ माँ बाप ने रिश्ता तै कर दिया बस वही चले गए।"9

उपन्यास में बस्तर की बदलती आदिवासीयत पर भी लेखिका की नज़र है। आधुनिकीकरण और बाज़ारीकरण की बदलती बयार ने आदिवासी समाज और बस्तर के लोगों में उनके रहन-सहन और आचरण को भी खासा प्रभावित किया है। उपन्यास में यह पत्रकार अमित और विचारशील कम्मो के संवाद से बताया गया है। "चेंज आया है कम्मो यही कि पैसे की गिनती नहीं जानने वाले भोले आदिवासी भी अब पैसे का मूल्य जानने लगे हैं पर कम्मो सवाल यह पैदा होता है कि इन्हें पैसे का मोल करना किसने सिखाया। इनकी संस्कृति को किसने बाजार में ला खड़ा किया। आदिवासी नृत्य, आदिवासी कला का मोल महत्त्व किसने बताया और जब वे अपना मोल, अपनी अहमीयत समझ गए हैं तब अपने में लौटना कितना मुश्किल होता है।"10 आदिवासी सहज और सरल होते हैं इसलिए जल्दी से ही किसी पर विश्वास कर लेते हैं अशिक्षा के कारण उनमें अंधविश्वास का बोलबाला है। "आदिवासी निपट जंगली भैंसे की तरह होते हैं जिधर सींग समा जाए उधर घुस जाएँगे । जिधर हाँक दो उधर चल देंगे पिछले दिनों राजा को प्यार करने वाले ये अंधविश्वासी एक बाबा बिहारी दास के पीछे पागल हो उठे थे क्योंकि उसने अपने आप को मरे हुए महाराजा प्रवीरचंद भंजदेव का अवतार बताया । उस बाबा ने कंठी चलाई ये लोग शराब माँस छोड़कर अपने घरों के जानवर सस्ते दामों में बेच आए। जब होश आया तो ये और गरीब हो चुके थे। उनकी अज्ञानता का दूसरों ने हमेशा फायदा उठाया।"11 आदिवासी लड़कियों को शहर के बाबू ने अपने प्रेम के चंगुल में फंसाया और ये लड़कियां भी उनके पीछे बावरी हो गई और समाज ने भी इन्हें अंततः ठुकरा दिया। ये शहरीबाबू जिन्होंने इन्हें अपनी हवस का ग्रास बनाया उन्होंने थोड़े दिन कलेक्टर के डर से इन्हें घर में रखकर उनसे शादी रचाकर क्या किया? इन जंगली हरिणियों को घरेलू औरतों की तरह पर्दे में रखना चाहा, बाहरी आदमियों से मिलने जुलने से रोका कहीं किसी से बात करते देख लेते तो मारपीट शुरू कर देते थे। ये आदिवासियों की तरह साफ दिल नहीं थे । इन मुद्दों पर आदिवासियों ने पंचायत बुलाई। इन यातनाओं और धोखे का शिकार हुई घर लौटी हुई लड़कियों को वापस घरों में रखने से इंकार किया । युवा पुरुषों में आक्रोश बढ़ा कि घर की औरतें शहरी बाबुओं की ओर आकर्षित हो रही थी ....पैसे से उनके घर की इज्ज़त ख़रीदी जा रही थी और यही सब बदलाव बाजारीकरण की देन था जो यहाँ के रहन-सहन, दिनचर्या, आचरण सब में आ घुल-मिल गया था जैसे कि नई फसल के लिए जमीन को उल्टा पुल्टा जा रहा हो बस सब वैसा ही लग रहा था। आदिवासियों की सहजता को लेखिका ने अनेक उदाहरणों से स्पष्ट किया है । लेखिका अमित के माध्यम से बताती है कि ये आदिवासी कितने निपट सरल और जमाने के हिसाब से पिछड़े हैं। इनका सच्चा उदाहरण वे अमित के ब्याज से दंतेवाड़ा का जिक्र करते हुए देती हैं, "मैंने वहाँ कई घरों में देखा कि सागौन के मोटे मोटे कांड उन्होंने काट-काट कर अपने घर में छत में लगाए हैं और बल्लियाँ गाडी हैं। एक घर में मैंने गिना काफी बड़ा घर छत पर करीब 70 कांड लगे थे अब इन्हें कौन सिर फोड़कर समझाए की सागौन की लकड़ी कितनी कीमती होती है, उसके कितने फर्नीचर बनते है। उनके लिए तो लकड़ी बस लकड़ी है। .... मेरे कहने का मतलब यही है कि अभी उनका भोलापन नहीं गया है इन्हें समय चाहिए अभी शहरीपन मत आने दो वह लोग इन्हें लूटकर खा जाएंगे, खा रहे हैं ।"12

कबीरा इस संसार में गैल्या बनकर जी- नई संस्कृति के दुःख और घाव नये हैं- सच है विरासत में मिले संस्कारों का निभाव दूसरी जगह मुश्किल है । नई संस्कृति के नाम पर मिले घाव दुख और अभावों के ऐसे नश्तर हैं जो आदमी को चीरकर रख देते हैं । समाज को या अपनी संस्कृति को बदलने वाले दुख तो पाते हैं पर शायद आने वाली पीढ़ी के लिए नया रास्ता ज़रूर बन जाता है। छोटे शहरी, छोटे लोग अपने आप में अपने को नए बनाने में कुंठित अभावग्रस्त ज़रूर हैं पर वे ऐसा करके आने वाली नई पीढ़ी को साफ सुथरे विचार, साफ सुथरी ज़मीन भी दे सकेंगे...उपन्यास में कम्मो का ऐसा मानना है । पर दूसरी ओर अमित के अनुसार बदलाव हमेशा दुःखी करता है एक तरह की लालसा और स्वार्थ पैदा करता है। बदलाव की और कुछ पाने की ये प्यास कभी ख़त्म नहीं होती। यदि उन्नति के नाम पर दुःख,पीड़ा, स्वार्थ और ईर्ष्या ही मिले तो किसी भी स्थान को तरक्की नहीं करनी चाहिए। लेखिका ने अमित के शब्दों में यही बताया है कि, "जैसा है वैसा ही रहने दो थोड़े से मुट्ठीभर सुखों पर खुश हो लेने वाले लोगों को क्यों दिवालिया बनाना चाहती हो, क्यों उन्हें बेईमानी, स्वार्थ, बनावटीपन और खुदगर्जी के नरक में झोंकना चाहती हो, क्यों उन्हें तपाना चाहती हो जैसे हैं वैसे ही भले हैं वे लोग।"13 इस प्रकार लेखिका ने इन उदाहरणों के माध्यम से और आदिवासी संदर्भों से ये स्पष्ट किया है कि तरक्की और विकास के नाम पर संस्कृति किस तरह पिछड़ती जाती है और किस प्रकार नई संस्कृति के घाव पुरानी संस्कृति और सभ्यता के लिए नासूर बन जाते हैं।

अनेक संघर्षों को उकेरते हुए भी लेखिका ने प्रकृति और ज़िंदगी के जुड़ाव को अनेक उदाहरणों से स्पायित किया है। कभी कम्मो के माध्यम से, तो कभी मोना दीदी के माध्यम से, तो कभी नसीमा के माध्यम से परवेज़ प्रकृति की गोद में जा बैठती है। प्रकृति एक अविरल सोते की तरह उन्हें सुख देती जान पड़ती है। रजनीगंधा के फूलों के मोहक सौन्दर्य को लेखिका ने इस प्रकार चित्रित किया है, "जादूगर फूल हैं। नन्ही-नन्ही बातों जैसे नन्हे-नन्हे फूल- लंबी फैली बाँहों जैसी शाखें। ये फूल देखते भी हैं और बातें भी करते हैं। ये फूल मेरी जान हैं। जानती हो इन फूलों के लिए मुझे रोज़ काफी दूर चलकर जाना होता है, करीब एक मील। ज़रा थकान नहीं लगती; ये मुझसे बातें करते चलते रहते हैं।"14 प्रकृति ज़िंदादिल बनाती है, जीवन से जोड़ती है, मनुष्य के रागात्मक पक्ष को जीवित रखती है। "कम्मो दीदी को रजनीगंधा से इतना प्यार है कि बीमार रहती है तब भी इन्हें लेने जाती हैं। ये फूल दीदी के पास हों तो ये ठीक रहती हैं वरना उदास, बीमार । ....और मुझे कौन से फूल पसंद है ? गुलमोहर, अमलतास। इन फूलों को जब भी देखता हूँ तो मैं चकित रह जाता हूँ कहाँ से किसका रंग ये चुरा लाए हैं। रंगों से, प्यार से, लदे-फदे ये फूल कितने ताज़गी देते हैं... अहसास नहीं होने देते कि हम अकेले हैं। ये डालो पर उछल-उछल कर चीखते हैं... हम साथ हैं-हम साथ हैं। क्या नहीं?... हूँ फौलादी फूल। फौलादी फूल जानती हो किसी सूनी सड़क पर अकेला खड़ा गुलमोहर कितनी रौनक ला देता है, किसी वीरान सूने जंगल में अकेला अमलतास कितनी सुंदरता कितना सुख भर देता है, कि राह चलता थका मुसाफिर भी थोड़ी देर को ताज़गी से भर उठता है । दीदी माना गुलमोहर और

अमलतास भावुक फूल नहीं है पर ज़िंदगी के कितने जुड़े लगते है कि आदमी टूटते,बिखरते-बिखरते संभल जाता है। इन फूलों में भरी-पूरी परिभाषा क्या तुम्हें नहीं लगती।"15चाँद से मनुष्य का जुडाव पुराना है। उसकी कलाओं की ही तरह मनुष्य का मन बढता-घटता रहता है। "नसीमा, मैंने अनगिनत बार चाँद को देखा है पर यहाँ जो चाँद उगा है, लग रहा है पहली बार उसे देखा है।"16

जीवन-दर्शन और कोरजा- कोई भी लेखन उदात्त तभी हो पाता है जब उच्च जीवन मूल्यों और आदर्शों को साथ लेकर चलता है । प्लेटो, लौंजायनस और भारतीय चिन्तकों की नज़र से भी देखा जाए तो लेखन मानवता की गिरहें खोलने वाला हो तो ही श्रेयस्कर है। लेखन वही श्रेष्ठ है जिसमें जीवन दर्शन के गूढ़ रहस्य छिपे होते हैं । लेखिका ने इन रहस्यों की तहें उपन्यास में जहाँ तहाँ चरित्रों की छाँव में खोलने की कोशिश की है । ये गुंजलके कभी कम्मो के चरित्र के माध्यम से, कभी मोना के चरित्र के माध्यम से, कभी नसीमा के चरित्र के माध्यम से, कभी साजो के चरित्र के माध्यम से, तो कभी अमित के चरित्र के माध्यम से खुलती हुई जान पड़ती हैं ।" आज की ज़िंदगी क्या है सिर्फ धोखे के बीच जीना, हर किसी का परायापन और स्वार्थ झेलना... यह कहना भी मुझे ग़लत लगता है कि हर कोई झूठा ही होता है ।नहीं, सच भी होते है, लेकिन वह सच्चाइयाँ अपने लिए नहीं होती, ना इतनी बड़ी सारी दुनिया में हर कोई अपनों में केंद्रित अपने में भरा-पूरा ही होता है। उसके पास न किसी के लिए फ़ुरसत है ना ज़रूरत। तुम्हारी तरह मुझे भी पता है दुनिया में हज़ारों सुख है लेकिन किसी को अगर नसीब न हो तो इसका ये मतलब क़तई नहीं कि दुनिया में सच है ही नहीं। सच है बस इत्तफाक कहो या और कुछ उस से हमारी मुलाकात नहीं हो पाती कहीं हम इत्तिफाकन उससे मिल भी जाते हैं तो अनजाने अन पहचाने से गुजर जाते हैं। कम्मो आदमी हमेशा स्वार्थी रहा वह आने वाले कल में पीछे वाले कल को भूल जाता है। पर यह धोखा है। पिछला कभी भुलाया नहीं जा सकता । पिछला चोर की तरह मन के किसी कोने में दुबका रहता है और जब हम अकेले होते हैं तब धीरे से आहिस्ता से हमारे सामने आ खड़ा होता है कि देखो हम हैं। पिछला जब भी दोहरा कर सामने आता है तब पीड़ा से भरा चुभता हुआ, चीरता हुआ-सा ।"17 "दुनिया में भगवान ने जितने भी जीव भेजे उनमें सबसे ज्यादा स्वार्थी नाटककार है तो वह है मनुष्य सारी उम्र सिर्फ नाटक करता है अपने से ही भागता फिरता है।"18 'कोरजा' उपन्यास में कदम-कदम पर लेखिका ने कथा की नायिका नसीमा तथा अन्य महत्त्वपूर्ण पात्र यथा एहसान, फातिमा, कम्मो और मोना दीदी के माध्यम से अत्यंत ही मनोवैज्ञानिक ढंग से सूत्र शैली में जीवन के दार्शनिक पक्ष को इंगित किया है।

किस्सागोई और कोरजा-किस्सागोई कथा साहित्य का महत्त्वपूर्ण तत्त्व है। और इसके माध्यम से हिंदी साहित्य के कई कथाकारों ने कई महत्त्वपूर्ण कहानियाँ और उपन्यास पाठकों को प्रदान किए हैं। स्त्री रचनाकारों में देखे तो नासिरा शर्मा, उषा प्रियंवदा, राजी सेठ और मेहरुन्निसा परवेज़ प्रमुख हैं। 'कोरजा' उपन्यास को भी किस्सागोई के माध्यम से लेखिका ने रोचक बनाया है। नानी अमजद बी की कहानी हो या, रज्जो की कहानी या कि बस्तर के ऐतिहासिक स्वरूप का आख्यान परवेज़ ने किस्सागोई के माध्यम से उसे अत्यन्त ही रोचक ढंग से प्रस्तुत किया है। । चाहे अतीत की स्मृतियों का आख्यान हो या किसी चरित्र की परतें खोलने की कोशिश उपन्यास में इस शैली के माध्यम से लेखिका ने कहन के ठेठ अंदाज़ को बख़ूबी प्रस्तुत किया है। इसी क्रम में लेखिका हिंदी के आत्ममुग्ध साहित्य और लेखन पर भी प्रकारांतर से कटाक्ष करती हुई नजर आती है और कहती है जो लिखा जाए उसे शाया कम किया जाए और हर पाठक को लिखने में कम ,पढने में ज्यादा विश्वास करना चाहिए। वे कहती हैं कि जो अपना है उसे अपने से जुदा क्यों करें, बल्कि उसे और किसी अँधेरी कोठरी में बंद कर दें, दूसरों के लिए अपने को क्यों बेतरतीब करें, मन की बातें अपनी हैं उन्हें अपने लिए ही रहने दो यदि वे दूसरे तक पहुँचती हैं तो थोडी वाहवाही होगी, थोड़ी सी टिप्पणियाँ होंगी पर वे ख्यालात तो उतने ही पराए हो जाएँगे न!

हमारे समाज में स्त्रियाँ सदैव से द्वितीय नागरिक रही हैं। वे सपने देखती हैं पर उन सपनों को समाज नोच देता है, वे बेखौफ और उन्मुक्त गगन की आकांक्षिणी हैं परन्तु समाज उनके लिए हदें खींच देता है। उपन्यास में इन्हीं हदबंदियों को सूक्ष्मता से रेखांकित कर हर उम्र और वय की स्त्री के मन की तहें खोलने की कोशिश की गई है। एक स्त्री किस तरह और कितने मोर्चों पर छली जा सकती है, उसके लिए जीवन जीना किस तरह एक चुनौती बन जाता है और किस तरह कोई अपने इर्द-गिर्द के किरदारों के अतीत और वर्तमान का मूक साक्षी बन जाता है, परवेज़ ने अत्यन्त ही कलात्मकता से उसे उकेरने की चेष्टा की है। रहमान खाँ हो या जमशेद हो या जुम्मन मामू ये पुरुष के भेष में मानव संस्कृति के नासूर हैं जो हर युग और संस्कृति में मानवता को शर्मसार करते रहे हैं, उसे रेहन पर रखकर उसकी आबरू का ब्याज़ वसूलते रहे हैं। उपन्यास कई महत्त्वपूर्ण बिंदुओं पर बात करता है ।मानवेतर संबंधों पर बात करते हुए लेखिका बताती है कि मिट्ठू बेईमान पक्षी है और मैना ईमानदार। राबिया के माध्यम से लेखिका यह भी बताती है कि गलगल चिड़िया कहाँ रहती है और क्यों उसे रानी चिड़िया कहते हैं। और किस कदर पक्षियों से एक घर आबाद हो जाता है और किस तरह उनके न रहने पर मन का एक कोना वीरान।

यदि यह कहा जाए कि उपन्यास मुस्लिम वर्ग के स्त्री जीवन के त्रासद पक्ष और बस्तर के आदिवासी जीवन के परिवेश को चित्रित करता है तो निःसंदेह यह उपन्यास का केवल एकपक्षीय अध्ययन होगा । दरअसल कम्मो, फातिमा, राबिया, साजो, अंजूमन बी, शोना माँ, मंदाकिनी, मोना दी और नसीमा सरीखे स्त्री किरदार किसी एक धर्म ,वर्ग या जाति के नहीं है वरन् इनकी सत्ता सार्वभौमिक है और परवेज़ ने स्त्री के इसी शाश्वत पक्ष को कोरजा में शब्द-दर- शब्द आवाज़ प्रदान की है।

संदर्भ सूची-

1. कोरजा, पृ.171
2. वही, पृ. 230-231
3. वही, पृ. 30
4. वही, पृ. 53
5. वही, पृ. 72
6. वही, पृ. 179
7. वही, पृ.147
8. वही, पृ. 179-180
9. वही, पृ. 14
10. वही, पृ. 104
11. वही, पृ. 105
12. वही, पृ. 106
13. वही, पृ. 108-109
14. वही, पृ.-112,113
15. वही, पृ. 113
16. वही, पृ. 160
17. वही, पृ. 114
18. वही, पृ. 114